ARYAVART SHODH VIKAS PATRIKA
RNI TITLED NO. UPBIL04292
RNI REG. NO. UPBIL/2014/66218 **PP. No.- 124-127**
ISSN NO. - 2347 – 2944 (Print)
e-ISSN NO.- 2582 – 2454 (Online)
Vol.-19, No.- IV, Issues-38, YEAR- Oct.-Dec.2025

!!पाणिनीय व्याकरण में समाज समीक्षा!!

डॉ0 रविशंकर पाण्डेय
सहायकाचार्य– संस्कृत विद्याविभाग, सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय, वाराणसी (उ0प्र0) भारत

Received-08.10.2025, Revised-16.10.2025, Accepted-22.10.2025 E-mail : aaryvart2013@gmail.com

सारांश: भाषा एवं समाज में सदैव विशिष्ट संबंध है। सामाजिक जीवन के विभिन्न अंगों से संबंधित शब्द भाषा में उत्पन्न और प्रयुक्त होते हैं। शब्द ही पुरातत्त्व के अवशेषों की भाँति प्राच्य अर्थों का संस्मरण कराते हुए अतीतकालीन जीवन पर प्रकाश डालते हैं। कितने ही शब्द उत्पत्त्यानन्तर कालांतर में भी प्रचलित रहते हैं।

आचार्य पाणिनि ने अपने समकालीन सामाजिक जीवन का शब्दों के रूप में सूक्ष्मान्वेषण कर उसे अपने शब्दशास्त्र स्वरूप परम् महत् जलौघ में उन्हें स्थान दिया।

यह व्याकरणशास्त्र ही षडङ्गों मे प्रधान तथा समग्र विद्याओं मे उत्तरा विद्या के रूप में स्वीकृत है।

व्याकरणं नामेयं उत्तरा विद्यां', प्रधानं च षट्सु अंगेषु व्याकरणम्' ।

उपयुज्यमान व्याकरणीयग्रन्थों में पाणिनीय व्याकरणशास्त्र भारतीय शब्दविद्या का अति प्राच्य तथा प्रधानग्रंथ है, पाणिनि तात्कालिक व्यवहारशिष्टभाषा का अन्वेषण कर इस शब्शास्त्र का प्रणयन करते हैं। तत्कालीन समाजिकजीवन का कोई भी ऐसा अंश अवशिष्ट नहीं, जिसका व्यवहार अष्टाध्यायी में अभिव्यञ्जित न होता हो।

कुंजीभूत शब्द– इक्कीसवी सदी, लोक जीवन, लोक संस्कृति, नवीनतम पीढ़ी, संस्कारगत रीति–रिवाज,मजदूर, किसान,रूढिया।

भूगोल, शिक्षा, साहित्य, सामाजिक जीवन, कृषि, वाणिज्य व्यवसाय, सिक्के, मापतोल, सेना, शासन, राजा,राज्य, मंत्रिपरिषद्, यज्ञ, देव, जनपद, सम्बन्ध आदि से संबंधित जहाँ तक मानव जीवन का विस्तृत है। वहाँ तक शब्दों को एकत्रित करने के लिये आचार्य का यह शब्दजाल पूरित है। इन सभी शब्दों तथा तत् सम्बन्धी सूत्रों पर विचार करने से यह भी स्पष्ट ज्ञात होता है कि संस्कृत उस समय सामान्य व्यवहृत भाषा थी। दूर से पुकारने–आह्वाहन (दूराद्ध ते च ङ), प्रत्यभिवादन में (प्रत्यभिवादेऽशूद्रे[4]), प्रश्नोत्तर में(पृष्टप्रतिवचने,[5]', अथवा डांटने (आम्रेडितंभर्त्सने[6]) आदि के लिये जिस प्रकार वाक्यों और शब्दों में स्वरों का प्रयोग होता था। उनके नियम तत्–तत् सूत्रों में दिए गए हैं, जो व्यावहारिक उपयोगिता को उपस्थापित करते हैं। शब्दों की व्याख्या करने के कारण व्याकरण शब्दशास्त्र है वस्तुतः वाङ्मय में अनन्त शब्द था उन शब्दों के अर्थ प्रतिपादनार्थ ही यह शब्दानुशासन नामधेय शास्त्र किया यह न केवल शब्दानुशासन करता है, अपितु गौणमुख्यन्यायेन तत्कालीन समाज का भी द्योतक है। इसके इस गुह्य स्वरूप को उद्घाटित करना ही मेरे इस शोधपत्र का ध्येय है।

आचार्य के शब्दोपस्थापन की प्रक्रिया मे तात्कालिकी सामाजिक व्यवस्था/व्यवहार निगूढित है।

वस्तुतः आचार्य ने अपने समय के समाज और भाषा के प्रतिपादनार्थ यह कार्य अत्यन्त दक्षता के साथ किया। यह वैशिष्ट्य न तो उनसे पौर्वात्य और न ही पाश्चात्य आचार्यों के शास्त्र मे दृष्टीगोचर होता है। इस दृष्टि से आचार्य पाणिनि भारतीय इतिहास के लिये अतीव उपयोगी है।

पाणिनी द्वारा अष्टाध्यायी में सामाजिक तथा भौगोलिक विषयों का वर्गीकरण कुछ निश्चित नियमों के अनुसार किया गया था, यथालभ्य जिनका समुत्थापन मेरे द्वारा किया जा रहा है:

आचार्य के द्वारा प्रयुक्त स्थानों का विवेचन– सर्वप्रथम स्थाननामों के उपरान्त जुड़नेवाले शब्द, जैसे पुर, नगर, ग्राम आदि ।

नगर तथा ग्रामों के अनेक नाम, जो कि चार कारणों से निर्मित होते हैं,वे चारों अर्थ चातुरर्थिक कहलाते हैं, जिनका निर्देशन ४।२।६७ से ४।२।७० तक के सूत्रों में किया गया है,अग्रिम २१ सूत्रों में (४।२।७१ से ९१ तक) इन्हीं अर्थों की अनुवृत्ति जाती है।

(अ) 'तदस्मिन्नस्तीति देशे तन्नाम्नि'[7], वह इस देश में है, अर्थात् जो वस्तु जिस स्थान में उत्पन्न होती है। उस वस्तु के नाम से ही उस स्थान को जाना जाता है, यथा–'पलाशाः सन्ति अस्मिन्देशे सः पालाशः देशः।

(आ) 'तेन निर्वृत्तम्[8], यहां निवृत्त शब्द का अर्थ है, निर्मित अर्थात् उसने यह स्थान बसाया।पुराकाल में बसाने वाले के नाम से ही शहर या गाँव का नाम रखा जाता था। कुशाम्बेन निर्वृत्ता नगरी = कुशाम्ब + अण् + ङीप् → कौशाम्बी नगरी। कुशांब नाम के राजा द्वारा बसाई गई नगरी कौशांबी कहलाई ।

(इ) 'तस्य निवासः'[9] किसी देश का नाम निर्देश उस देश में जिनका निवास है, उनके आधार पर उसका नाम रखने के लिए इस सूत्र का प्रयोग है, यथा–शिबीनां निवासः देशः = शिबि अर्थात्–शिवि नाम के क्षत्रिय जहाँ रहें वह प्रदेश शैव हुआ।

(ई) 'अदूरभवश्च'[10] सूत्रस्थ अदूरभव शब्द का है निकट,अर्थात् यदि कोई स्थान किसी दूसरे स्थान के निकट बसा हुआ होता है, तो वह भी उसके नाम से पुकारा जाता है; यथा विदिशायाः अदूरभवम् (= निकटम) नगरम् = वैदिशम् नगरम्।

हिमवतः अदूरभवम् नगरम् = हैमवतम् नगरम्, एतदनुसार बहुत से स्थान नामों के उद्धरण अष्टाध्यायी में किया गया है।

यथा– **वुञ्छण्कठजिलसेनिरढञ्ण्ययफक्फिञिञ्ञ्यकक्ठको**[11] सूत्र के १७ गणों में दो सौ अट्ठाइस स्थानों के नाम प्राप्त होते हैं।

पाणिनीय व्याकरण में अधोक्त नदियों के नामों का भी वर्णन आचार्य ने किया है।

सुवास्तु (४।२।७७), सिंधु (४/३/९३), विपाश् (४।२।७४', उद्धध (३।१।११५) भिद्य (३।११११६, देविका (७७३।१), सरयू (६१२।१७४), अजिरवती (६।३।११९), शरावती (६।३।१२०), चर्मण्वती (८२।१२)।

सुवास्तुः– सुवास्त्वादिभ्योऽण् (४।२।७७)–सुवास्तु वैदिक काल की नदी थी, जो कि वर्तमान में स्वात के नाम से व्यवहृत है। इसकी तलसटी में प्राचीन काल से अद्यावधि एक विशेष प्रकार के कंबल बुने जाते हैं। पाणिनि ने **(पाण्डुकम्बलादिनि ४।२।११)** पांडु कंबल नाम से उनका उल्लेख क्रिया है। सुवास्तु और गौरी के मध्य में एक बीर जाति के लोग बसते थे जिन्हें यूनानियों ने अस्सकेनोई (ेंेंमदवप) और पाणिनि ने आश्वकायन **(४।१।९९, नडादिभ्यः फक्)** कहा है,

I S S N NO. - 2347 – 2944 (Print)
e-I S S N NO.- 2582 – 2454 (Online)
Vol.-19, No.- IV, Issues-38, YEAR- Oct.-Dec.2025

सिंधु– प्राच्या सिंधु वर्तमान की सिंध है, जिसका उल्लेख **सिन्धुतक्षशिलादिभ्योऽणञौ**[12] सूत्र में किया गया है । सिंधु के नाम से उसके पूर्वी किनारे की तरफ पंजाब में फैला हुआ प्राचीन सिंधु जनपद (सिंधु–सागर दुआब) था, जिसका पाणिनि ने अपने सूत्र में उल्लेख किया है **सिंधुतक्षशिलादिभ्योऽणञौ**[13]। वर्तमान सिंध प्रांत का नाम सौवीर था। उसका भी उल्लेख आचार्य ने सौवीर के गोत्रों का परिचय देते हुए **पुंयोगादाख्यायाम्**[14] किया है। सिंधु नदी कैलाश के पश्चिमी तटांत से उद्गमित होती हुई कश्मीर को दो भागों में विभाजित कर गिलगिट–चिलास प्राचीन दरद् देश में प्रवेशकर दक्षिणवाहिनी होती हुई दरद् के चरणों में पहिली बार मैदान में उतरती है। इस भौगोलिक सच्चाई को जान कर प्राचीन भारतवासी सिंधु को 'दारदी सिंधुः' कहते थे। **'प्रभवति'**[15] सूत्र पर काशिका में 'दारदी सिंधुः' उदाहरण आया है।

देविका– इस नदी का उल्लेख **देविकाशिंशपादित्यवाड्दीर्घसत्रश्रेयसामात्**[16] सूत्र में प्राप्त होता है। भाष्य में देविका के किनारे उगनेवाले चावल 'दाविकाकूलाः शालयः' कहे गए हैं। देविका मद्रदेश में बहनेवाली एक प्रसिद्ध नदी थी

अजिरवती–गंगा की सहायक नदियों में अजिरवती का नाम अष्टाध्यायी में आया है, **मतौ बह्वचोऽनजिरादीनाम्**[17] यही अचिरवती (वर्तमान राप्ती नदी थी, जिसके किनारे प्राचीन श्रावस्ती स्थित थी ।

सरयू– इसका भी नाम अष्टाध्यायी में आता है, जिससे 'सारव (सरय्यां भवं– सारवमुदकम्= **दाण्डिनायनहास्तिनाय०**[18] विशेषण बनता था। सरयू नाम की प्रसिद्ध नदी तो कोसल जनपद में है।

चर्मण्वती– विंध्याचल की नदियों में चर्मण्वती (चंबल) का नाम सूत्र में आया है, **आसन्दीवदष्ठीवच्चक्रीवत्कक्षीवद्रुमण्वच्चर्मण्वती**[19]।

शरावती– कुरुक्षेत्र की घग्घर नदी के साथ प्रवाहित होने वाली यह प्राच्य और उदीच्य देशों की बीच के सीमा थी। उपरोक्त सूत्रों से न केवल नदियों का वर्णन प्राप्त होता है अपितु उन नदियों के किनारे रह रही सभ्यताओं,नगरों और उनके सामाजिक व्यवहारों का भी ज्ञान होता है

पाणिनीय व्याकरण मे जनपद,नगर,पुर,ग्राम,खेन,घोष,कच्छादि के नामों का भी विशेष उल्लेख मिलता है।

कंबोज (४।१।१७५) – पाणिनि के समय में यह एकराज्य जनपद था। यहाँ का राजा और क्षत्रियकुमार दोनों कंबोज कहलाते थे, (अपत्यवाची और राजावाची प्रत्ययों का **'कम्बोजाल्लुक्'** सूत्र से लोप होता है)। **कच्छादि** (४।२।१३३), **सिंध्वादि** (४।३।९३) गणों में सिंधु, वर्ण, गंधार, मधुमत्, कंबोज, कश्मीर, साल्व और कुलुन, इन आठ जनपदों के नाम सामान्य हैं, जो पाणिनिकृत प्रतीत होते हैं।

वृजि (मद्रवृज्योः कन्–४।२।१३१)– बिहार प्रांत में गंगा के उत्तर का प्रदेश वृजि कहलाता था, जहाँ विदेह लिच्छवियों का राज्य था।

मगध; द्वयञ्मगधकलिङ्गसूरमसादण्[20]– गंगा के दक्षिण का प्रदेश मगध जनपद था जहाँ राजतंत्र शासन था ।

कलिंग; द्वयञ्मगधकलिङ्गसूरमसादण्– कलिंग पाणिनि के समय में राज्य जनपद था, किंतु सोलह महाजनपदों की सूची में उसकी गिनती नहीं है।

सूरमस; द्वयञ्मगधकलिङ्गसूरमसादण्– यह नाम केवल अष्टाध्यायी में आया है। ज्ञात होता है कि असम प्रांत में प्रसिद्ध सूरमा नदी का अपवाह और पर्वत–उपत्यका का प्राचीन नाम सूरमस था ।

अवंति; स्त्रियामवन्तिकुन्तिकुरुभ्यश्च[21]– यह मध्यभारत का प्रसिद्ध जनपद था, जिसकी राजधानी उज्जयिनी थी (गणपाठ ४।२।८२; घूमादिभ्यश्च–४।२।१२७)।

कुंति; स्त्रियामवन्तिकुन्तिकुरुभ्यश्च– भाष्य के अनुसार सूत्र (वृद्धेत्कोसलाजादाञ्ञ्यङ्–४।१।१७१) के इकारांत एकराज जनपदों में कुंति और अवंति की भी गणना थी। महाभारत के अनुसार कुंति अवंति जनपद का पड़ौसी था।

नगर; कन्थापलदनगरग्रामह्रदोत्तरपदात्[22]– प्राचीन स्थान नामों के अंत में जुड़ने वाला यह महत्त्वपूर्ण उत्तर पद था, पाणिनि के अनुसार प्राच्य और उदीच्य दोनों भागों में नगर का प्रयोग होता था, **अमहन्नवं नगरेऽनुदीचां** (६।२।८६)

पुर; प्रस्थपुरवहान्ताच्च[23]– नगर की भाँति यह भी बहुव्यापी उत्तरपद था। पाणिनि ने सूत्र ६।२।१०१ में हास्तिनपुर, फलकपुर और मार्देयपुर, तथा सूत्र ६।२।१०० में अरिष्टपुर और गौड़पुर का उल्लेख किया है।

ग्राम; कन्थापलदनगरग्रामह्रदोत्तरपदात्[24]।

खेट; चेलखेटकटुककाण्डं गर्हायाम्[25]– हिंदी आदि भाषाओं का 'खेड़ा' इसी से निकला है। मध्यदेश से लेकर पश्चिम में गुजरात तक यह उत्तरपद प्रयुक्त होता है। पाणिनि के अनुसार कुत्सित नगर खेट कहे जाते थे ।

घोष; घोषादिषु च[26]– अहीर ग्वालों का छोटा गाँव घोष कहलाता था

कच्छ (कच्छाग्निवक्त्रवर्त्तोत्तरपदात्–४।२।१२६) कच्छांत नामों का व्यवहार समुद्रतट के लिए प्रचलित था। काशिका में दारुकच्छ और पिप्पलीकच्छ उदाहरण मिलते हैं

पाणिनीय व्याकरण मे निर्दिष्ट समाज व्यवस्था के वर्णन क्रम मे अत्यन्त महत्वपूर्ण वर्ण,जाती कुलादि का विवेचन।

सगोत्र– गोत्र अष्टाध्यायी का महत्त्वपूर्ण शब्द है। पाणिनि के अनुसार अपत्यं पौत्र प्रभृति गोत्रम् (४।१।१६२) यह गोत्र की परिभाषा थी। इसका अर्थथा पौत्र प्रभृति यद पत्यं तद्गोत्रसंज्ञं भवति, अर्थात् एक वयो वृद्ध के पोते पड़पोते आदि, जितनी सन्तान होगी वह गोत्र कही जायगी। गोत्र प्रवर्तक मूल पुरुष को वृद्ध. स्थविर या वंश्य भी कहते थे। उदाहरण के लिये यदि मूल पुरुष का नाम गर्ग होता, तो उसका पुत्र गार्गि,पौत्र गार्ग्य और प्रपौत्र गार्ग्यायण कहलाता था ।

१. मूलपुरुष या गोत्रकृत्– गर्ग
२. पुत्र या अनंतरापत्य– गार्गि (गर्ग +इ)
३. गोत्रापत्य या पौत्र– गार्ग्य(गर्ग + य)
४. युवा या प्रपौत्र– गार्ग्यायण (गर्ग+ फक् –आयन्)

सपिण्ड– यह सूत्र युग का विशिष्ट शब्द था जो संहिता, ब्राह्मण, आरण्यकों में अप्राप्य है। धर्मशास्त्रों के अनुसार पिता की सातवीं पीढ़ी और माता की पाँचवीं पीढ़ी तक के संबंधी सपिण्ड कहलाते हैं

सनाभि– समाननाभि के स्थान में सनाभि आदेश होता है (६।३।८५)। नाभि का यहाँ अथ गर्भ की नाल है।

शालि–माता, पिता के द्वारा अपने सभी संबंधित बांधव ज्ञाति कहे गए हैं (६।२।१३३, काशिका, ज्ञातयो मातृ पितृ संबंधिनो बांधवा। पाणिनि ने ज्ञातिको स्व का पर्याय कहा है। स्वमज्ञातिधनाख्यायाम्, १।१।३५)। संभवतः यहाँ केवल पितृकुल के संबंधियों का ही ग्रहण है।

संयुक्त– संयुक्त ससुराल के संबंधियों को कहते थे, ६।२।१३३, काशिका, संयुक्ताः स्त्री संबंधिनः श्यालादयः)। पाणिनि ने श्वसुर श्वश्रू (१।२।७१), श्वसुर्य (= श्वसुर पुत्र को संयुक्त कहा है (४।१११३७)।

कुल– परिवार की संज्ञा कुल थी (४।१।१३६ ४।२।६६)। कुल की प्रतिष्ठा पर प्राचीन भारतीय बहुत ध्यान देते थे। प्रतिष्ठित और यशस्त्री कुल महाकुल कहलाते थे। समाज में उनका स्थान बहुत ऊँचा माना जाता था। कुल में उत्पन्न व्यक्ति कुलीन (४।१।१३६) और महाकुल में उत्पन्न महाकुलीन कहलाते थे।

पारिवारिक संबन्धों को भी आचार्य ने अपने ग्रन्थ में विवेचित किया है, यथाः

माता, पिता, (१।२।७० पितामहः पितृव्य (४।२।३६); भ्राता, सोदर्य (४।४।१०६); ज्यायान् भ्राता (४।१।१६४), स्वसा (१।२।६८); पुत्र पौत्र (५।१।१०); पितृष्वसा (८।३।८४); उसका पुत्र पैतृष्वसेय (४।१११३२); मातृष्वसा (८।३।८४), उसका पुत्र मातृष्वसेय (४।१।१३४); स्वस्त्रीय (४।१।१४३); भ्रातृव्य (४।१।१४४); मातामह (४।२।३६); मातुल (४/२/३६), मातुलानी (४।११४६)।

पिता मात्रा– (१.२.७०) माता पिता दोनों के लिये एक शेष वृत्ति द्वारा माता का लोप करके 'पितरौ' शब्द का प्रयोग होता था।

अन्नादि का विवेचन–

यवागू ४/२/१३६ओदन की तरह जौ की लपसी भी जनता का प्रिय भोजन था। सूत्रो के उदाहरणो मे अनेको बार यवागू का उल्लेख आता है। साल्व जनपद मे यवागू लागो का विशेष प्रिय भोजन था पाणिनि ने उसे साल्विका यवागू कहा है। साल्व जनपद की पहचान देश के उस भू–भाग से की गई है जो अलवर से वीकानेर तक फैला हुआ है।

नीवार (नौ वृ धान्ये[27])जगल मे स्वयं उपजने वाला घटिया किस्म का धान्य था। लोक मे इसे ही पसही (प्रसातिका) या तिन्नी का चावल कहते हैं।

पयस्य या गव्य[28] दूध से बने हुए खाद्य पदार्थों को गव्य या पयस्य कहा गया है। दूध दही मटठा इनका सूत्रो में उल्लेख है। सूत्र ७/२/१८ मे जिस फाण्ट का उल्लेख है वह भी गव्य पदार्थ ही था। उसी दिन के दूध से तत्काल निकाले हुए मक्खन को फाण्ट कहा जाता है।

कुल्माष[29] पाणिनि ने उस तिथि का नाम पौर्णमासी कहा है, जिस दिन वर्ष में एक बार कुल्माष नामक अन्न नियमत खाने की प्रथा थी **(तदस्मिन्नन्न प्राये सञ्ज्ञायाम् कुल्माषादञ्** ५/२/८२ ८३)। कुल्माष क्या था, इस पर प्राचीन साहित्य से कुछ प्रकाश पडता है। निरुक्त मे कुल्माष को निकृष्ट भोजन कहा गया है **(कुल्माषान् चिदाहर इत्यवकुत्सिते** १/४) ।

यवक ५/२/३पाणिनि और चरक दोनो में इस चावल का उल्लेख है। सूत्र ५/४/३ के अन्तर्गत गण पाठ मे भी यवक आया है **(यव व्रीहिषु** ५/४/३)।

शालि ५/२/२– शालि का तात्पर्य जडहन से है, जो कि मार्गशीर्ष में होता है। इसके विरुद्ध व्रीहि बरसाती चावल है जो सावन–भादो की फसल मे होते हैं। शालि के खेत शालेय और व्रीहि के ब्रैडेय कहलाते थे।

षष्टिका ५/१/६०साठ रात या दो महीने मे पककर तैयार होने से इस धान का यह नाम पडा षष्टिका षष्टिरात्रेण पच्यन्ते। लोक मे इसी का नाम साठी है।

इस प्रकार पाणिनीय व्याकरण में वर्णित सूत्रों के द्वारा तात्कालिकी सभ्यताओं, नगरों उनके सामाजिक व्यवहार आदि का परिज्ञान होता है।

उपसंहारः– विश्व की किसी भी भाषा का व्याकरण इतना सुव्यवस्थित पूर्ण और वैज्ञानिक नही है जितना संस्कृत भाषा का। सस्कृत व्याकरण परम्परा का अध्ययन प्राचीन है, जिसकी चरम परिणति पाणिनीय अष्टाध्यायी में देखने को मिलती है। लोक ही व्याकरण का सबसे महान् आवपन या कोष है। जो शब्दों के अपरिमित भण्डार से भरा रहता है, उस लोक के प्रति आचार्य पाणिनि की बढी हुयी निष्ठा एव श्रद्धा थी। लोक प्रमाण जिसे संज्ञा प्रमाण कहा गया है के आधार पर ही आचार्य ने अपने महान् शास्त्र की रचना की। लोक के विषय में पाणिनि की प्रगाढ श्रद्धा ही अष्टाध्यायी की बहुमुखी सास्कृतिक सामग्री का सेतु है। इस दृष्टि को लेकर आचार्य के नेत्रो मे अभूतपूर्व तेज भर गया था। गुप्त प्रकट जो शब्द सामग्री जहाँ थी वह सब उन्हे उस प्रकार से प्रतिभासित हो गई जैसी पुराकाल के अन्य किसी आचार्य को नहीं हुयी थी। शब्दो की खोज मे लोक का तिल–तिल परिचय, जिसे व्याख्याकारों ने सूक्ष्मेक्षिका कहा है, पाणिनीय कार्य शैली की विशेषता थी और इसी से सर्वाङ्ग पूर्ण शास्त्र का जन्म हुआ।

यह शोधपत्र प्रतिपादित करेगा कि पाणिनीय व्याकरण का अध्ययन केवल भाषा–विज्ञान तक सीमित न रहकर समाज–विज्ञान, संस्कृति, इतिहास और दर्शन के अध्ययन में भी अत्यंत उपकारक है। आधुनिक युग में भी यह प्राक्कालीन भारतीय समाज के मूलत्व का उपस्थापक है।

आचार्य की प्रतिभा का वैशिष्ट्य इस तथ्य में निहित है कि उन्होंने भाषा के नियमों के माध्यम से समाज को शाश्वत रूप प्रदान कर दिया। यही कारण है कि सहस्राब्दियों के उपरांत भी पाणिनीय व्याकरण न केवल जीवित है, बल्कि सामाजिक और सांस्कृतिक अध्ययन का भी आधार बना हुआ है।

वस्तुतः यह शास्त्र तत्कालीन भारतीय जीवन और सस्कृति का कोश ही बन गया है। सामाजिक जीवन, आर्थिक जीवन, धार्मिक जीवन, राजनैतिक जीवन शिक्षा एव विद्या सम्बन्धी जीवन एव भौगोलिक विवरण सबके विषय मे पाणिनि ने कण–कण करके सामग्री का सुमेरु ही खडा कर लिया।

महर्षि पाणिनि ने अपने समाकालीन सामाजिक जीवन का शब्दो के रुप मे सूक्ष्म अध्ययन किया था और अपने शब्द शास्त्र मे उन्हे स्थान दिया।यह विषय ज्ञापित करता है कि भाषा न केवल अभिव्यक्ति का साधन है, अपितु सामाजिक स्मृति का कोश भी है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. महा०भा०१द्य२द्य३२।
2. प०पशा०महा० १द्य१द्य१
3. पा०सू०दृ८।२।८४।
4. पा०सू०दृ८।२।८३।

I S S N NO. - 2347 – 2944 (Print)
e–I S S N NO.- 2582 – 2454 (Online)
Vol.-19, No.- IV, Issues-38, YEAR- Oct.-Dec.2025

5. पा०सू०दृ८ ।२ ।६३ ।
6. पा०सू०दृ८ ।२ ।६५
7. पा०सू०दृ४ ।२ ।६७
8. पा०सू०दृ४ ।२ ।६६
9. पा०सू०दृ४ ।२ ।६६
10. पा०सू०दृ४ ।२ ।७०
11. पा०सू०दृ४ ।२ ।८०
12. पा०सू०दृ४द्य३द्य६३
13. पा०सू०दृ४द्य३द्य६३
14. पा०सू०दृ४ ।१ ।४८
15. पा०सू०दृ४ ।३ ।८३
16. पा०सू०दृ७३ ।१
17. पा०सू०दृ६ ।३ ।११६
18. पा०सू०दृ६ ।४ ।१७४
19. पा०सू०दृ८ ।२ ।१२
20. पा०सू०दृ४ ।१ ।१७०
21. पा०सू०दृ४ ।१ ।१७६
22. पा०सू०दृ४ ।२ ।१४२
23. पा०सू०दृ४ ।२ ।१२२
24. पा०सू०दृ४ ।२ ।१४२
25. पा०सू०दृ६ ।२ ।१२
26. पा०सू०दृ६ ।२ ।८५
27. पा०सू०दृ४द्य३द्य४८
28. पा०सू०दृ४३१६०
29. पा०सू०दृ५द्य२द्य८३

*****